नईदुनिया

संपादकीय

पासपोर्ट का फर्जी खेल

ग्वालियर में सामने आया फर्जी पासपोर्ट का मामला केवल दस्तावेजी धोखाधड़ी नहीं, बल्कि देश की आंतरिक सुरक्षा से जुड़ा गंभीर विषय है। डबरा के सिमरिया टेकरी स्थित बौद्ध विहार कॉलोनी के एक ही पते पर फर्जी दस्तावेजों के आधार पर बीस पासपोर्ट जारी होने का खुलासा सुरक्षा और सत्यापन व्यवस्था पर कई सवाल खड़े करता है। बताया जा रहा है कि ये पासपोर्ट बांग्लादेशी नागरिकों के नाम पर जारी हुए। एसटीएफ ने इस मामले में मास्टरमाइंड समेत दो लोगों को गिरफ्तार किया है और जांच में 40 से अधिक फर्जी पासपोर्ट से जुड़े नेटवर्क की जानकारी सामने आई है।

सबसे बड़ा सवाल यह है कि एक ही पते पर इतने लोगों के पासपोर्ट बनने के बावजूद किसी स्तर पर संदेह क्यों नहीं हुआ। पासपोर्ट के लिए आधार, पैन और अन्य पहचान संबंधी दस्तावेज तैयार किए गए, फिर पुलिस सत्यापन हुआ और अंतत: भारतीय पासपोर्ट जारी हो गया। यह पूरी प्रक्रिया कई स्तरों से गुजरती है। ऐसे में केवल लापरवाही की बात कहना पर्याप्त नहीं होगा। जांच यह भी तय करेगी कि कहीं इस नेटवर्क को स्थानीय स्तर पर किसी तरह की मदद तो नहीं मिली।

मास्टरमाइंड के अनुसार, वर्षों पहले बांग्लादेश से आए लोगों के लिए भारतीय पहचान से जुड़े दस्तावेज तैयार कराए गए। यदि यह दावा सही है तो आधार केंद्रों, स्थानीय सत्यापन और अन्य दस्तावेजी प्रक्रियाओं की भी गंभीर जांच आवश्यक है। एक फर्जी पहचान पत्र के आधार पर दूसरा दस्तावेज और फिर पासपोर्ट बन जाना पहचान व्यवस्था की कमजोरियों को उजागर करता है।

पासपोर्ट सत्यापन में पुलिस की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। संबंधित व्यक्ति के निवास और पहचान की जांच के बाद रिपोर्ट भेजी जाती है। डबरा क्षेत्र में इतने पासपोर्ट एक ही पते से जारी होने के बाद अब पुलिस सत्यापन की प्रक्रिया भी जांच के दायरे में आना स्वाभाविक है। यह पता लगाया जाना चाहिए कि सत्यापन वास्तव में मौके पर जाकर किया गया था या प्रक्रिया में कहीं गंभीर चूक हुई।

मामले का एक चिंताजनक पहलू राष्ट्रीय सुरक्षा भी है। भारतीय पासपोर्ट अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारतीय नागरिक की पहचान का प्रमाण है। यदि विदेशी नागरिक फर्जी तरीके से इसे हासिल कर लें तो उसके दुरुपयोग की आशंका बढ़ जाती है। ऐसे लोग विदेश यात्रा कर सकते हैं और किसी भी आपराधिक गतिविधि का असर भारत की प्रतिष्ठा और सुरक्षा पर पड़ सकता है।

एसटीएफ की कार्रवाई इस बड़े नेटवर्क तक पहुंचने की शुरुआत है। केवल दो आरोपितों की गिरफ्तारी पर्याप्त नहीं होगी। प्रत्येक फर्जी पासपोर्ट की पूरी श्रृंखला की जांच होनी चाहिए कि दस्तावेज किसने तैयार किए, सत्यापन किसने किया और प्रक्रिया में किस स्तर पर अनियमितता हुई। साथ ही उन सभी लोगों की तलाश जरूरी है, जिनके नाम पर संदिग्ध पासपोर्ट जारी हुए हैं।

ग्वालियर की यह घटना देशभर की पहचान और पासपोर्ट व्यवस्था के लिए चेतावनी है। एक ही पते पर बड़ी संख्या में पासपोर्ट बनने जैसी असामान्य स्थितियों पर स्वचालित अलर्ट की व्यवस्था होनी चाहिए। पुलिस सत्यापन को अधिक जवाबदेह और तकनीकी रूप से मजबूत बनाने की जरूरत है।

आजकल

गड़बड़ी मानी, जिम्मेदार छुपाए

भोपाल में जीआईएसएस के दौरान रेतीघाट पर लगाया गया फाउंटेन अब घोटाले का फव्वारा बन गया है। नगर निगम की जांच समिति ने गड़बड़ी तो मान ली, लेकिन किसने की और इससे कितना नुकसान हुआ, यह नहीं बताया। यानी चोरी पकड़ी गई, पर चोर गायब कर दिया गया।

संचालनालय ने पकड़ी खामी। संचालनालय ने जब तथ्यात्मक प्रतिवेदन मांगा तो निगम बगले झांकने लगा। उप संचालक एकता अग्रवाल ने साफ लिखा कि रिपोर्ट में जिम्मेदार अधिकारियों के नाम नहीं हैं और आर्थिक क्षति का जिक्र तक नहीं है। 19 अगस्त को निगम आयुक्त को पत्र भेजकर खामियां गिनाई गईं, लेकिन आज तक पूरा जवाब नहीं आया।

निगम एक अप्रैल को बनी समिति की आड़ में कागजी खानापूर्ति करता नजर आ रहा है। व्यक्तिगत वर्जन के लिए अधिकृत नहीं हूं, कहकर जिम्मेदारी से पल्ला झाड़ा जा रहा है। आरोप है कि घटिया फाउंटेन ऊंचे दाम पर खरीदा गया और जल्दबाजी में उसका भुगतान भी कर दिया गया। आज फाउंटेन बंद है और जनता का पैसा डूब गया।

सवाल सिर्फ इतना नहीं है कि फाउंटेन क्यों बंद हुआ। सवाल यह है कि खरीद में गुणवत्ता की जांच किसने की, कीमत तय करने की प्रक्रिया क्या थी और भुगतान की मंजूरी किसने दी? यदि जांच समिति ने गड़बड़ी मानी है तो जिम्मेदारी तय करने से क्यों बचा जा रहा है?

यह केवल एक फाउंटेन का मामला नहीं, बल्कि सरकारी व्यवस्था की जवाबदेही का सवाल है। जब जांच में गड़बड़ी सामने आ चुकी है तो दोषी इंजीनियर, ठेकेदार और भुगतान करने वाले अधिकारियों की भूमिका स्पष्ट होनी चाहिए। कार्रवाई में देरी से संदेह और गहरा होता है। जनता के पैसे से होने वाले आयोजनों में यदि जिम्मेदारी तय नहीं होगी तो हर बड़े आयोजन में भ्रष्टाचार का फव्वारा इसी तरह बहता रहेगा।

प्रदेश के टाइगर रिजर्व में बढ़ते बाघ और घटते लोग

प्रदेश के नौ में से छह टाइगर रिजर्व इन दिनों शिकार, बाघों के बीच आपसी संघर्ष और बाघ-इंसान के बीच द्वंद्व से जूझ रहे हैं। शिकारी शिकार करने में कामयाब हो रहे हैं, बाघ आपस में लड़कर जान गंवा रहे हैं, जबकि रिजर्व से बाहर निकलने वाले बाघों के साथ इंसानों का आमना-सामना हो रहा है। नतीजा यह है कि बीते दस साल में आपसी संघर्ष के कारण 50 से ज्यादा बाघों की जान जा चुकी है और 200 से ज्यादा लोगों की मौत हुई है, जबकि हजारों पालतू मवेशी मारे जा चुके हैं। आने वाले दिनों में ये घटनाएं बढ़ सकती हैं। असल में रिजर्वों में जगह कम पड़ रही है और बाघों की संख्या बढ़ रही है।

प्रत्येक रिजर्व के लिए दस वर्षीय टाइगर कंजर्वेशन प्लान (टीसीएस) बनाया जाता है। इसमें संबंधित रिजर्व की आगामी जरूरत, संभावित चुनौतियों और उनके निदान की योजना भी होती है। जब से यह लागू किया जाता है, उसके तहत चरणवार काम होते हैं। इस पर बड़ी राशि खर्च की जाती है। हर दस वर्ष में नया टीसीएस बनाया जाता है। यह प्लान वैज्ञानिक आधार पर बनता है, लेकिन कई बार जमीन पर इसका पालन नहीं हो पाता।

रिजर्वों के आसपास बाघों की जान करंट लगाकर या जहर देकर ली जा रही है, जो बताता है कि रिजर्वों के आसपास वन्यजीवों की सुरक्षा के लिए अभी बहुत काम करने की जरूरत है। आपसी संघर्ष की सबसे ज्यादा स्थिति बांधवगढ़ टाइगर रिजर्व में बन रही है और बाघों की जान भी जा रही है। इसका मतलब साफ है कि रिजर्व में बाघों की संख्या ज्यादा है और उन्हें भरपेट शिकार नहीं मिल रहा। इनकी संख्या के संतुलन और शिकार की कमी को पूरा करने जैसे बड़े विषयों पर पर्याप्त काम नहीं हुआ है। जैसे-जैसे बाघों की संख्या बढ़ रही है, वैसे ही संघर्ष भी बढ़ रहा है।

रिजर्वों में बाघ तेजी से बढ़े हैं और शिकारी गिरोह भी सक्रिय हैं। शिकारियों से निपटने के लिए पर्याप्त मैनपावर नहीं है। सभी रिजर्वों के पास 20 से 30 साल पहले का मैनपावर है, उसमें भी कई पद खाली हैं। शिकारी गिरोह आधुनिक संसाधनों से लैस हैं, जबकि वन अमला खाली है। रिजर्वों में संदिग्ध प्वाइंटों पर न तो वॉच टावर हैं और न ही गश्त के लिए आधुनिक संसाधनों से लैस वाहन। नाममात्र बाघों को कॉलर आईडी लगाई गई है। रातापानी, माधव और दुर्गावती टाइगर रिजर्व के लिए अब तक अलग से एक्शन प्लान बनाने की तैयारी है। वन्यप्राणी बोर्ड की बैठक में इस पर चर्चा हो सकती है।

पहले एक बाघ को 20 से 25 वर्ग किलोमीटर का क्षेत्र चाहिए था, अब उसी क्षेत्र में दो से तीन बाघ रहने को मजबूर हैं। इससे टेरिटरी की लड़ाई बढ़ गई है। बाघ अपने क्षेत्र के लिए दूसरे बाघ को मार देता है या घायल कर देता है। कई बार शावकों की मौत भी इसी संघर्ष में हो जाती है। रिजर्व के अंदर शिकार की कमी भी एक बड़ा कारण है। चीतल, सांभर जैसे जानवरों की संख्या उस अनुपात में नहीं बढ़ी, जिस अनुपात में बाघ बढ़े हैं। इसलिए बाघ गांव की ओर जाने को मजबूर हो रहे हैं।

रिजर्व से सटे गांवों में रहने वाले लोगों का जीवन अब असुरक्षित हो गया है। रात में बाघ गांव में घुस जाता है और मवेशियों को उठा ले जाता है। कई बार लोग खेत पर जाते हैं तो अचानक बाघ से सामना हो जाता है। पालतू मवेशियों की मौत से ग्रामीणों में गुस्सा है और वे कई बार करंट लगाकर या जहर देकर बदला लेते हैं। यह सिलसिला थम नहीं रहा है। वन विभाग मुआवजा तो देता है, लेकिन वह नाकाफी है और समय पर नहीं मिलता।

पिछले दस साल में 50 से अधिक बाघ आपसी संघर्ष और मानव-द्वंद्व में मारे गए हैं, वहीं 200 से अधिक लोग बाघ के हमले में जान गंवा चुके हैं। हजारों मवेशी मारे गए हैं। यह आंकड़ा बताता है कि स्थिति कितनी गंभीर है। यदि समय रहते ठोस कदम नहीं उठाए गए तो आने वाले समय में यह संख्या और बढ़ सकती है। मध्यप्रदेश को टाइगर स्टेट कहा जाता है, लेकिन यदि बाघ ही सुरक्षित नहीं रहेंगे तो यह तमगा भी खतरे में पड़ जाएगा।

रिजर्व के आसपास बफर क्षेत्र में शिकार बढ़ाने और पानी की व्यवस्था करने से बाघ अंदर ही रहेंगे। दूसरा समाधान है कॉरिडोर को सुरक्षित करना। बाघ एक रिजर्व से दूसरे रिजर्व में जाते हैं और उनके रास्ते में गांव तथा सड़कें आ गई हैं। उन कॉरिडोर को अतिक्रमण मुक्त करना होगा।

तीसरा समाधान है मैनपावर बढ़ाना। 20 साल पुराने स्टाफ से आज के खतरे का सामना नहीं किया जा सकता। आधुनिक हथियार, ड्रोन, कैमरा और प्रशिक्षित स्टाफ की जरूरत है। चौथा समाधान है ग्रामीणों को जागरूक करना और मुआवजा प्रक्रिया को तेज करना। यदि ग्रामीणों को तुरंत और उचित मुआवजा मिलेगा तो वे बाघ को मारने की नहीं सोचेंगे।

रातापानी, माधव और दुर्गावती को नया टाइगर रिजर्व बनाया गया है। इससे बाघों को नया घर मिलेगा और पुराने रिजर्वों पर दबाव कम होगा। लेकिन केवल नया रिजर्व घोषित करने से काम नहीं चलेगा। वहां भी प्रबंधन मजबूत करना होगा। नए रिजर्व में शिकार, पानी और सुरक्षा की पूरी व्यवस्था करनी होगी, तभी बाघ वहां टिक पाएंगे। वरना वे फिर पुराने रिजर्वों की ओर लौट आएंगे।

बाघ और इंसान दोनों को जीने का हक है। जंगल बाघ का घर है और गांव इंसान का। लेकिन जब जंगल छोटा होगा तो टकराव बढ़ेगा। सरकार को टाइगर कंजर्वेशन प्लान को केवल कागजों में नहीं, बल्कि जमीन पर लागू करना होगा। वैज्ञानिक तरीके से बाघों की संख्या का प्रबंधन, शिकार का प्रबंधन और मानव-बाघ संघर्ष को कम करने के उपाय करने होंगे। तभी मध्यप्रदेश का टाइगर स्टेट का गौरव बचा रहेगा और आने वाले दस साल में 50 बाघों और 200 लोगों की मौत की कहानी दोहराई नहीं जाएगी। सहअस्तित्व के बिना न जंगल बचेगा, न गांव।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

भोपाल के बड़े तालाब ने खुद बताई अपनी हद

भोपाल की लाइफलाइन बड़े तालाब की हद तय करने का ड्रामा एक बार फिर शनिवार से शुरू हुआ। पहले भी पांच बार सीमांकन हो चुका है, बावजूद इसके तालाब की हद तय नहीं हो पाई। नतीजतन अतिक्रमण बढ़ रहा है। कब्जे हटते भी हैं तो दिखावे के तौर पर। अब राष्ट्रीय हरित अधिकरण (एनजीटी) की सेंट्रल जोन बेंच के आदेश पर बड़े तालाब के फुल टैंक लेवल (एफटीएल) से सीमा तय करने के लिए नए सिरे से वैज्ञानिक सर्वे और सीमांकन शुरू हुआ है।

सात सदस्यीय कमेटी सुबह साढ़े नौ बजे भदभदा डैम पहुंची और मीडिया की मौजूदगी में एफटीएल की स्थिति का जायजा लिया। सुबह 10 बजकर 47 मिनट पर पहली बार ड्रोन उड़ाकर एरियल मैपिंग शुरू की गई। पहले दिन ही चौंकाने वाला सच सामने आया। शुरुआती सर्वे में पता चला कि 13 जगह तालाब का पानी पुरानी मुनारों से 20 से 60 फीट तक आगे फैला हुआ है। यानी तालाब ने खुद अपनी हद बता दी और पुरानी मुनारें सवालों के घेरे में आ गईं।

अब चुनौती यह है कि किनारों पर घनी झाड़ियां और घास होने से कई मुनारें ढंकी हुई हैं। कम रोशनी में ड्रोन की लिडार और रडार सेंसिंग प्रभावित हो रही है। दोपहर साढ़े तीन बजे बारिश शुरू होने के बाद सर्वे रोकना पड़ा। मध्यप्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड की निगरानी में भदभदा, सैर सपाटा और मुगलिया छाप क्षेत्र में एरियल सर्वे किया गया। इसके लिए आइडियाफोर्ज सिस्टम का जीपीएस और जियो टैगिंग से लैस संवेदनशील ड्रोन इस्तेमाल हो रहा है। सटीकता के लिए अलग-अलग स्थानों से जुटाए गए डेटा और पॉइंट्स की ओवरलैपिंग की जाएगी, जिसे सॉफ्टवेयर प्रोसेस करेगा। इससे तालाब के वास्तविक फैलाव का डिजिटल नक्शा तैयार होगा और पुरानी मुनारों की लोकेशन भी सत्यापित की जाएगी।

सर्वे के दौरान 1660.82 से 1660.84 फीट के बीच जलस्तर दर्ज किया गया। जलस्तर को नियंत्रित करने के लिए दोपहर 12 बजकर 40 मिनट से 2 बजकर 30 मिनट के बीच भदभदा डैम के दो गेट खोलकर पानी छोड़ा गया। एफटीएल 1660.80 फीट पर बनाए रखने की कोशिश की गई। एफटीएल की स्थिति में ही तालाब की वास्तविक सीमा का सटीक निर्धारण संभव है।

जानकारी के अनुसार बड़े तालाब का वैज्ञानिक सीमांकन पहली बार 2004-05 में भोज वेटलैंड प्रोजेक्ट के तहत किया गया था। इसके बाद 2013-15 में एनजीटी के निर्देश पर, 2018-19 में अतिक्रमण की शिकायतों के बाद, 2022 में भोज वेटलैंड रूल्स के तहत 50 मीटर नो-कंस्ट्रक्शन जोन और अक्टूबर 2025 में ड्रोन जियो टैगिंग के जरिए दोबारा सीमांकन हुआ। फरवरी 2026 के सर्वे के बाद अतिक्रमण चिह्नित कर हटाने की कार्रवाई भी हुई। इसके बावजूद मुनारों के गायब होने, अतिक्रमण और विभागीय समन्वय की कमी के कारण फिर सीमांकन कराना पड़ रहा है।

भदभदा डैम पर एफटीएल बनाए रखने के लिए दो गेट खोले गए, ताकि ड्रोन सर्वे में पानी की सही सीमा कैद हो सके। प्रशासन का कहना है कि एफटीएल से ऊपर का क्षेत्र ही तालाब का डूब क्षेत्र है और वहीं अतिक्रमण नहीं होना चाहिए। लेकिन हकीकत यह है कि इसी डूब क्षेत्र में कई कॉलोनियां और फार्म हाउस बन गए हैं, जिन्हें राजनीतिक संरक्षण प्राप्त होने के आरोप लगते रहे हैं। यह पूरा सर्वे एनजीटी की फटकार के बाद शुरू हुआ है। एनजीटी ने कई बार प्रशासन से पूछा कि जब तालाब की सीमा ही तय नहीं है तो अतिक्रमण हटेगा कैसे? हर बार प्रशासन ने कागजों पर मुनारें दिखा दीं, लेकिन जमीन पर अतिक्रमण बढ़ता रहा। इस बार एनजीटी ने वैज्ञानिक तरीके से ड्रोन और सैटेलाइट इमेजरी से सर्वे करने का आदेश दिया है, ताकि कोई हेरफेर न हो सके।

बड़े तालाब के किनारे अतिक्रमण कोई नई बात नहीं है। सैर सपाटा क्षेत्र से लेकर मुगलिया छाप तक कई जगह पक्के निर्माण हो गए हैं। कुछ जगह रिसॉर्ट बन गए हैं तो कुछ जगह निजी बंगले। इन्हें हटाने के लिए पहले भी नोटिस दिए गए, लेकिन कार्रवाई ठंडे बस्ते में चली गई। अब जब पानी खुद पुरानी मुनारों से 60 फीट आगे निकल आया है तो यह साफ है कि या तो मुनारें गलत लगाई गईं या अतिक्रमण ने तालाब को निगल लिया। इस सर्वे के बाद डिजिटल नक्शा तैयार होगा और उसके आधार पर अतिक्रमण चिह्नित किया जाएगा। लेकिन बड़ा सवाल यह है कि क्या प्रशासन इस बार कार्रवाई करेगा या फिर यह सर्वे भी पांच पुराने सर्वे की तरह फाइलों में बंद हो जाएगा। भोपाल के नागरिकों के लिए बड़ा तालाब केवल पानी का स्रोत नहीं, बल्कि शहर की पहचान है। इसकी हद तय होना केवल तकनीकी मामला नहीं, बल्कि भोपाल की सांसों का सवाल है।

पहले दिन के सर्वे ने यह साबित कर दिया है कि प्रकृति अपना रास्ता खुद ढूंढ लेती है। इंसान चाहे जितनी मुनारें गाड़ ले, पानी अपनी हद खुद तय करता है। अब देखना यह है कि प्रशासन तालाब की इस सच्चाई को मानता है या फिर अतिक्रमणकारियों के दबाव में फिर से कागजी सीमांकन करके अपनी जिम्मेदारी पूरी कर लेता है।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

फोरलेन और उद्योग की मांग, चबूतरा-शेड के दिन गए

मध्यप्रदेश की राजनीति में एक बड़ा बदलाव देखने को मिल रहा है। प्रदेश के ज्यादातर मंत्री, सांसद और विधायक अब क्षेत्र में टू-लेन और फोरलेन सड़कों का निर्माण चाहते हैं तो कुछ औद्योगिक सेक्टर विकसित कराने पर जोर दे रहे हैं। लगभग हर दूसरे जनप्रतिनिधि को क्षेत्र में उद्योग चाहिए, जहां क्षेत्र के लोगों को रोजगार व स्वरोजगार से जोड़ा जा सके। इसके लिए वे मुख्यमंत्री कार्यालय को पत्र भेज रहे हैं। कुछ अपनी मांगें मनवाने में सफल भी हो चुके हैं।

हाल में स्वीकृत हुए भोपाल से विदिशा, सिवनी से बालाघाट और बीना से खिमलासा-मालथौन फोरलेन जैसे मार्गों के पीछे ऐसे ही कई माननीयों का हाथ है। यही नहीं, वे नए कामों के साथ ही पुराने कामों के मेंटेनेंस के लिए भी अलग से बजट चाहते हैं। ऐसा इसलिए क्योंकि 15 से 30 वर्ष पहले क्षेत्र में हुए अधोसंरचनात्मक काम अब मेंटेनेंस मांग रहे हैं। समय रहते मेंटेनेंस नहीं कराया तो जनता भड़क जाएगी।

असल में राजनीति करना बड़ी प्रतिस्पर्धा हो चला है। राजनीतिक मामलों के जानकार यश भारतीय का कहना है कि पहले बगैर काम के कई जनप्रतिनिधि लंबे समय तक चुनाव जीत लेते थे। अभी भी मध्यप्रदेश के दूरस्थ व आदिवासी अंचलों में यह स्थिति है, लेकिन जो क्षेत्र शिक्षा से काफी पहले जुड़ चुके हैं, वहां जागरूकता आई है। नतीजा यह है कि लोग अपने जनप्रतिनिधियों से अप्रत्यक्ष रूप से हिसाब मांगने के लिए तैयार हैं। दूसरी तरफ काम नहीं करने वाले कई जनप्रतिनिधियों को इस बात का भय है कि चुनाव में कहीं वे बहिष्कार का शिकार तो नहीं हो जाएंगे।

पिछले विधानसभा चुनावों के दौरान बिहार और महाराष्ट्र जैसे राज्यों में यह स्थिति देखने को मिल चुकी है। ऐसे में जनप्रतिनिधि समझ चुके हैं कि काम ही वह आधार है, जिसके आधार पर जनता का सामना कर पाएंगे। इसलिए जागरूक जनप्रतिनिधि भी अब कोई खतरा उठाने की स्थिति में नहीं हैं और सरकार के सामने क्षेत्र की जरूरत को रख रहे हैं।

उन्हें अपने क्षेत्र में पूर्व में हो चुके अधोसंरचनात्मक कार्यों के मेंटेनेंस के लिए अलग से बजट भी चाहिए। उनके क्षेत्र में पहले जो सड़कें बनी थीं, वे अब टूट गई हैं और पुल कमजोर हो गए हैं। अगर उनका मेंटेनेंस नहीं हुआ तो नई सड़क बनाने का कोई अर्थ नहीं रहेगा। इसलिए वे मेंटेनेंस के लिए अलग बजट मांग रहे हैं।

लोग अब समझ चुके हैं कि जब तक क्षेत्र में अच्छी और टिकाऊ सड़कें नहीं होंगी, औद्योगिक गतिविधियों की कल्पना नहीं कर सकते। बांधों के बगैर सिंचाई नहीं होगी और जमीन होने के बावजूद पैदावार नहीं ले पाएंगे। अच्छे स्कूल-कॉलेजों के बगैर बच्चों का शैक्षणिक विकास संभव नहीं होगा। अब लोग सादगीपूर्ण तरीके से जनप्रतिनिधियों को उन कामों को करने के लिए विवश कर रहे हैं, जिनकी जरूरत है।

जबकि सत्तापक्ष के कुछ विधायक अब भी ट्रांसफर-पोस्टिंग और शिकवा-शिकायतों में उलझे हैं। ऐसे जनप्रतिनिधियों से जुड़े क्षेत्रों में विकास का बुरा हाल है। यह अंतर ही बताता है कि कौन जनता के साथ है और कौन केवल पद के साथ। सरकार के सामने सत्ता पक्ष के हर दूसरे चुने हुए जनप्रतिनिधि अधोसंरचनात्मक कामों की मांग कर रहे हैं।

सरकार के सामने चुनौती है कि वह हर दूसरे चुने हुए जनप्रतिनिधि की मांग को कैसे पूरा करे। बजट सीमित है, लेकिन मांगें बड़ी हैं। फिर भी मुख्यमंत्री कार्यालय में इन पत्रों पर गंभीरता से विचार हो रहा है और कुछ पर अमल भी शुरू हो गया है।

असल में जनप्रतिनिधियों का एक बड़ा तबका लंबे समय तक जनता को चबूतरा और शेड निर्माण जैसे कामों में उलझाए रखता आया है। बीते कुछ वर्षों में समय के साथ लोग जागरूक हुए और अपने अधिकारों की बात करने लगे हैं। वे क्षेत्र में ठोस काम चाहते हैं, जिसमें सभी का भला जुड़ा हो। सामाजिक एवं आदिवासी मामलों के जानकार राजकुमार सिन्हा का कहना है कि लोग समझ चुके हैं कि जब तक क्षेत्र में अच्छी और टिकाऊ सड़कें नहीं होंगी, औद्योगिक गतिविधियों की कल्पना नहीं की जा सकती।

मध्यप्रदेश में लंबे समय से विधानसभा की कार्यवाही को ऑनलाइन किए जाने के प्रयास हो रहे हैं, लेकिन अब तक कार्यवाही का सीधा प्रसारण शुरू नहीं हो पाया है। नेता प्रतिपक्ष उमंग सिंघार कई बार मांग उठा चुके हैं। विधायक हीरालाल अलावा का कहना है कि कई सदस्य क्षेत्र के मुद्दे नहीं उठाते, केवल हां में हां मिलाते हैं। विधानसभा सत्रों की कार्यवाहियों के अवलोकन से यह बात साफ है कि क्षेत्र के मुद्दों व विकास की कई सदस्यों को चिंता ही नहीं है। ऐसे सदस्य कार्यवाही के सीधे प्रसारण से बेनकाब होंगे।

कुल मिलाकर मध्यप्रदेश की राजनीति में एक नया अध्याय शुरू हो रहा है, जहां चबूतरा और शेड की राजनीति खत्म हो रही है और फोरलेन सड़क, उद्योग और शिक्षा की बात हो रही है। जनप्रतिनिधियों को चुनाव में बहिष्कार का भय सता रहा है। लोकतंत्र के लिए यह शुभ संकेत है, क्योंकि जब जनता हिसाब मांगेगी, तभी विकास होगा और यही बदलाव प्रदेश को आगे ले जाएगा।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)